e-ISSN: 2319-8753 | p-ISSN: 2347-6710

IJIRSET

International Journal of Innovative Research in
SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

Volume 11, Issue 2, February 2022

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 7.569

9940 572 462 | 6381 907 438 | ijirset@gmail.com | www.ijirset.com

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

कृषि का आधुनिकीकरण और आर्थिक विकास

Kanhaiya Lal Meena

Assistant Professor, Department of Economics, SPNKS Govt. PG College, Dausa, Rajasthan, India

सार

आर्थिक विकास का ऐतिहासिक अनुभव और आर्थिक विकास की सैद्धांतिक व्याख्या यह स्पष्ट करते हैं कि आर्थिक विकास की प्रारंभिक अवस्था में प्रत्येक अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। विकसित अर्थव्यवस्थाओं के विकास अनुभव की पुष्टि करते हैं। विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के राष्ट्रीय उत्पाद, रोजगार और निर्यात की संरचना में कृषि क्षेत्र का योगदान उद्योग और सेवा क्षेत्र की तुलना में अधिक होता है। ऐसी स्थिति में कृषि का पिछड़ापन सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को पिछड़ेपन में बनाये रखता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कमजोर वर्ग के लोग जिनमें लघु एवं अति लघु कृषक और कृषि श्रमिक सम्मिलित हैं, अधिकांशत: गरीबी के दुश्चक्र में फँसे रहते हैं और वे निम्नस्तरीय संतुलन में बने रहते हैं। इनकी जोत का आकार तो छोटा होता है साथ ही इनके पास स्थायी उत्पादक परिसंपत्ति की कमी बनी रहती है। इनकी गरीबी अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन का मुख्य कारण होती है।

1990 के दशक में भारत सरकार ने आर्थिक संकट से बाहर आने के क्रम में अपने पिछले आर्थिक नीतियों से विचलित और निजीकरण की दिशा में सीखने का फैसला किया और अपनी नई आर्थिक नीतियों को एक के बाद एक घोषित करना शुरू कर दिया। आगे चलकर इन नीतियों के अच्छे परिणाम देखने को मिले और भारत के आर्थिक इतिहास में ये नीतियाँ मील के पत्थर सिद्ध हुईं। उस समय पी वी नरसिंह राव भारत के प्रधानमंत्री थे और मनमोहन सिंह वित्तमंत्री थे।

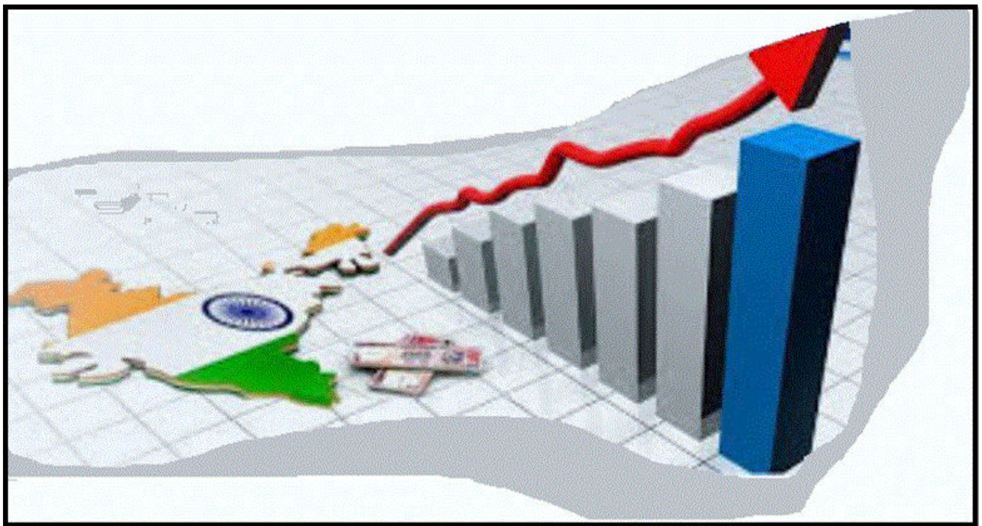

इससे पहले देश एक गंभीर आर्थिक संकट के दौर से गुजर रहा था और इसी संकट ने भारत के नीति निर्माताओं को नयी आर्थिक नीति को लागू के लिए मजबूर कर दिया था। संकट से उत्पन्न हुई स्थिति ने सरकार को मूल्य स्थिरीकरण और संरचनात्मक सुधार लाने के उद्देश्य से नीतियों का निर्माण करने के लिए प्रेरित किया। स्थिरीकरण की नीतियों का उद्देश्य कमजोरियों को ठीक करना था।
जिससे राजकोषीय घाटा और विपरीत भुगतान संतुलन को ठीक किया जा सके।

परिचय

यूएसएसआर ने 1927 से सामूहिक कृषि प्रणाली अपनाकर बड़े पैमाने पर यंत्रीकृत कृषि प्रणाली अपनाकर कृषि विकास किया। जापान ने भी कृषि अतिरेक का गैर कृषि कार्यों में प्रयोग किया। यह अनुमान किया गया है कि जापान ने 1890 से 1920 की अवधि में कृषि उत्पादन में लगभग 77 प्रतिशत वृद्धि की। इसमें 31 प्रतिशत उत्पादन में वृद्धि फसल के अंतर्गत क्षेत्र बढ़ने के कारण और 46 प्रतिशत उत्पादन कृषि उत्पादकता में वृद्धि के कारण बढ़ा। ताइवान और दक्षिणी कोरिया के आर्थिक विकास में भी कृषि क्षेत्र की

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

भूमिका निर्णायक रही है।विकसित और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के उपरोक्त अनुभव यह स्पष्ट करते हैं कि किसी अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास की पूर्वापेक्षा कृषि क्षेत्र का विकास है। कृषि क्षेत्र का विकास कृषि एवं संबद्ध क्रियाओं में लगे हुए लोगों की आर्थिक स्थिति में तो सुधार करता ही है, साथ ही यह गैर कृषि क्षेत्र के लिये खाद्यान्न, कच्चा पदार्थ, बाजार और श्रम शक्ति की आपूर्ति करता है। इस प्रकार कृषि उत्पादन आर्थिक विकास में पाँच प्रकार से सहायक होता है।[1,2]

1. आर्थिक विकास के साथ कृषि उत्पाद विशेषकर खाद्यान्नों की मांग बढ़ती है।
2. कृषि उत्पादों के निर्यात से विदेशी विनिमय की प्राप्ति होती है। आर्थिक विकास की प्रारंभिक अवस्था में विदेशी विनिमय की प्राप्ति आवश्यक होती है।
3. नवीन औद्योगिक क्षेत्रों और इकाइयों को श्रमशक्ति की प्राप्ति कृषि क्षेत्र से ही होती है।
4. विकास के प्राथमिक चरण में परिवहन और औद्योगिक विकास के लिये संसाधन आपूर्ति कृषि क्षेत्र से ही होती है।
5. ग्रामीण जनसंख्या की आय में वृद्धि होने पर औद्योगिक उत्पादनों की मांग बढ़ती है। मांग में वृद्धि औद्योगिक क्रियाओं में प्रसार के लिये प्रमुख प्रेरक शक्ति होती है।

कृषि विकास किसी अर्थव्यवस्था के समग्र विकास में कई रूपों में सहायक है अत: कृषि क्षेत्र में विनियोग को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र समस्त आर्थिक क्रियाओं को प्रभावित करता है। भारत में अनुकूल कृषि वर्ष अर्थव्यवस्था के लिये समृद्धि का वर्ष होता है प्रतिकूल कृषि वर्ष में अर्थव्यवस्था में विभिन्न प्रकार की आर्थिक कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जाती है। इन अनुभवपरक तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारत का आर्थिक ढाँचा आज भी कृषि पर ही निर्भर है। भारत जैसे विशाल भूभाग वाले देश में कृषि भूमि के समुचित उपयोग से ही राष्ट्रीय समृद्धि तथा व्यक्तिगत विकास संभव है, इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु भूमि की क्षमता, उवर्रता तथा उसके समुचित उपयोग का अध्ययन अत्यंत आवश्यक है क्योंकि ऐसे अध्ययनों से ही कृषि उत्पादन संबंधी तथ्यों का ज्ञान प्राप्त होता है जिसके आधार पर कृषि संबंधी योजनायें बनाई जा सकती हैं। भारत में यद्यपि 1 अप्रैल 1951 से नियोजन प्रारंभ हुआ, परंतु प्रथम द्वितीय तथा तृतीय योजनायें कृषि भूमि उपयोग सर्वेक्षण तक सीमित रही और कृषि उत्पादन, उत्पादिता तथा कृषि क्षेत्र को सुदृढ़ करने हेतु सार्थक प्रयास चतुर्थ पंचवर्षीय योजना से प्रारंभ किये गये जिसमें 390 लाख एकड़ भूमि को खाद्यान्नों की अधिक उपजाऊ बीजों द्वारा बोने का तथा 250 लाख एकड़ भूमि को बहु फसली योजना के अंतर्गत लाने का लक्ष्य प्रस्तावित किया गया था, जिसमें इस लक्ष्य की पूर्ति हो गई।[3,4]

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

1980 तक भूमि सुधार के रूप में लगभग 4.5 लाख हेक्टेयर भूमि की चकबंदी भी की गयी थी। पाँचवी योजना में 131 लाख हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि को सिंचाई के अधीन लाने का प्रस्ताव किया गया था इस लक्ष्य की भी पूर्ति की गयी। पाँचवी योजना की तुलना में छठी योजना में कृषि एवं संबंधित कार्यक्रमों में ढाई गुना तथा सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण पर लगभग साढ़े तीन गुना व्यय बढ़ाने का प्रस्ताव किया गया। छठी योजना के अंतर्गत सघन कृषि हेतु अधिक उपज देने वाले बीजों तथा नवीनतम उत्पादन तकनीक की जानकारी के लिये अनेक कार्यक्रम संचालित किये गये जिनमें मृदा संरक्षण की व्यवस्था, उर्वरकों की प्रचुरता, उत्तम बीजों की उपलब्धि, कृषक सेवा संस्थाओं में वृद्धि कृषि अनुसंधानशालाओं एवं शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना प्रमुख रहे।सातवीं योजना में कृषि विकास के लिये अधिक तीव्र दर की लक्ष्य रखा गया ताकि बढ़े हुए उपभोग स्तर पर खाद्यान्नों तथा खाद्य तेलों की मांग पूरी की जा सके और इनमें आत्म निर्भरता प्राप्त की जा सके। अब कृषि नीति सामाजिक न्याय के साथ-साथ उत्पादन बढ़ाने के अतिरिक्त पर्यावरण संरक्षण के प्रति भी सजग हो गयी है, क्योंकि भूमि और जल संसाधन को प्रदूषण से बचाना आवश्यक हो गया है। जुलाई 1991 में नई औद्योगिक नीति की घोषणा के बाद कृषि जैसे विशाल क्षेत्र के लिये कोई राष्ट्रीय नीति न हो तो अर्थ व्यवस्था में भारी शून्यता का अनुभव होता है क्योंकि कृषि राष्ट्र का गौरव ही नहीं बल्कि संपूर्ण अर्थ व्यवस्था की प्राण वायु भी है, इस महत्व को ध्यान में रखकर कृषि मंत्री डा. बलराम जाखड़ ने राष्ट्रीय कृषि नीति का मसौदा तैयार किया जिसे कुछ संसोधनों के बाद केंद्रीय मंत्रिमंडल ने स्वीकृति दे दी।

वर्तमान कृषि सकंट की ठीक-ठाक समझ हासिल करने के लिए हमारा विश्लेषण केवल कृषि क्षेत्र तक सीमित (Restricted) नहीं होना चाहिए क्योंकि सम्पूर्ण भारतीय अर्थव्यवस्था के सदंर्भ में खासकर 1991 में सरकार द्वारा पोषित 'नई आर्थिक नीति' के तहत इसकी वर्तमान स्थिति की ज्यादा सटीक व व्यापक समझ बनाई जा सकती है।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

नीति में यह 'नई' तबदीली कइि नई चीज नहीं थी बल्कि यह उस आर्थिक दशर्न को प्रभावकारी ढगं से लागू करना था जिसे नव उदारवाद व भमूडंलीकरण के नाम से प्रस्तुत किया गया था। ये सब साम्राज्यवादी परियाजेनायें हैं जो कि 'विकसित देशों की एकाधिकारी पूँजी के हितों के लिए मुस्तैद हैं और जिसका विकासशील देशों की बड़ी पूँजी के साथ मजबूत सश्रंय है (इनके बीच परस्पर निर्भरता के रिश्ते प्रमुख हैं जिनमें कभी कभार टकराहट भी होती है)। इस उदारवादी युग को आधारभूत क्षेत्र में राज्य व्यय, सब्सिडी तथा दूसरे विकास कार्यों में गिरावट, बड़े पैमाने पर सावर्जनिक क्षेत्र के निजीकरण, भारतीय बाजार विदेशी पूँजी के लिए खुलने के साथ बाजार की शक्तियों के खुले खले (Free Play), निर्यात के लिए उत्पादन पर जोर, मजदूरों के अधिकारों पर भीषण हमले तथा ऐसी ही अन्य नीतियों के रूप में पहचाना जा सकता है। ये सब भारतीय कृषि को प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। प्रत्यक्षतः सब्सिडियों, उर्वरकों और ऊर्जा (Power) (जो कि विकसित देशों की तुलना में पहले ही बहुत कम थी) पर व्यवस्थित हमला, किसानों के सामथ्र्य के अनुरूप बकैं ऋण पर हमला, सार्वजनिक खरीद एवं विपणन निकायों पर हमला, सिंचाई व अन्य आधारभूत सुविधाओं एवं मूलभूत वनस्पति शोध के प्रति गहराती उपेक्षा- इन सबने कृषि सकंट को अधिक गंभीर बनाने में यागेदान दिया है। इन सबके अतिरिक्त विभिन्न घरलेू व विदेशी पूँजी द्वारा उधोग या विशेष आर्थिक क्षेत्र (जो कि अधिकांश मामलों में वास्तविक तौर पर कुछ नहीं बल्कि रियल स्टटे की सट्टबोजी को निरूपित करते हैं) खालेने हेतु सरकार के प्रत्यक्ष तथा परोक्ष सहयागे से किसानों की जमीन का स्वैच्छिक अथवा बलपूर्वक अधिग्रहण भी कृषि सकंट गहराने का एक कारण है।[5,6]

विचार - विमर्श

स्वतंत्रता के बाद योजनाकाल में खाद्यान्नों के उत्पादन में सराहनीय प्रगति के बावजूद भी भारत में प्रति व्यक्ति दैनिक खाद्यान्न उपलब्धता 415 ग्राम ही है, यदि पिछले बीस वर्षों का औसत देखें तो प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता लगभग 497 ग्राम है। यदि हम हर भारतीय को औसत 500 ग्राम खाद्यान्य भी न दे तो कृषि क्षेत्र में हमारी उपलब्धि का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। राष्ट्रीय कृषि आयोजनों ने अनुमान लगाया है कि वर्ष 2000 तक खाद्यान्नों की मांग 22 करोड़ 50 लाख टन होगी, यदि खाद्यान्नों की उत्पादकता तेजी से न बढ़ाई गई और बीच में कभी सूखा या बाढ़ आ गयी तो देशवासियों की खाद्यान्न की न्यूनतम आवश्यकता की पूर्ति कठिन हो जायेगी ऐसी स्थिति में न फसल बीमा योजना काम करेगी और न कृषि को उद्योग का दर्जा देने की नीति। हमें उन क्षेत्रों का विकास करना चाहिए जिनकी क्षमता का अभी तक दोहन नहीं हो सका है। अनुमान है कि भारत में कृषि क्षमता का 40 प्रतिशत से अधिक का उपयोग नहीं हो पाया है। लगभग 10 करोड़ हेक्टेयर भूमि गैर बंजर भूमि है जिसका प्रयोग अत्यावश्यक है। कृषि क्षेत्र को अधिक लाभप्रद बनाने के लिये शोधकर्ता के दृष्टिकोण से निम्निलिखित कार्यक्रमों को प्रोत्साहित ही नहीं करना है वास्तविकता का जामा पहनाना होगा।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

1. मृदा सर्वेक्षण तथा मृदा संरक्षण।
2. अधिकतम कृषकों को कृषि की नवीनतम तकनीक का ज्ञान कराना
3. भूमिगत जल के वैज्ञानिक प्रयोग पर बल देना।
4. जल संसाधन के दुरुपयोग को रोकना।
5. कृषकों को समुचित प्रशिक्षण प्रदान करना।
6. मोटे अनाज के क्षेत्र में विस्तार करना।
7. दलहनी तथा तिलहनी फसलों का अधिक उत्पादन।
8. मुद्रा दायिनी फसलों का परंपरागत फसलों के साथ समायोजन।
9. नहरों की सुरक्षा एवं उनके उचित जल प्रबंध की व्यवस्था करना।
10. जैविक उर्वरकों के प्रयोग को प्रोत्साहन।
11. पशुओं की नश्लों में सुधार।
12. पशुओं के चारे वाली फसलों को प्रोत्साहन।

'नव उदारीकरण' के अप्रत्यक्ष प्रभावों ने भी अप्रत्यक्ष रूप से इस सकंट को बढ़ाने में महत्वपूर्ण यागेदान दिया है। सरकार द्वारा लागू वृहद् आर्थिक नीतियाँ (Macro-economic policies) नेत्वरित गति से भारतीय अर्थव्यवस्था के प्राथमिक व द्वितीयक क्षेत्र से तृतीयक (Tertiary) क्षेत्र की तरफ तबदीली तथा अनौपचारिकरण के मार्ग पर ले गई जिसके फलस्वरूप ग्रामीण राजेगार में वृद्धि में तीखी गिरावट, उद्यागे व कृषि में औपचारिक क्षेत्र के हिस्से के लगातार सिकुड़ते जाने के साथ शहरी श्रम शक्ति के बीच निम्न आय वाले अनौपचारिक "मिथ्या राजेगर" को बढ़ावा मिला। इन सबने क्रय शक्ति की गिरावट में योगदान दिया और भारतीय कृषि के राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय बाजार के साथ एकीकरण (Integration) (कई राज्यों में कार्पोरटे फार्मिगं के प्रवेश सहित) ने भारतीय कृषि को बाजार के उतार-चढ़ाव के प्रति अधिक नाजकु (Vulnerable) बनाया जिसने फसलों के वैश्विक स्तर पर गिरती कीमतों की पृष्ठभूमि (Backdrop) में हजारों छोटे व मध्यम किसानों के जीवन को तबाह कर दिया। दूसरी तरफ निर्यात के लिए उत्पादन पर जोर आंतरिक खाद्य सुरक्षा के लिए खतरा बन कर उपस्थित हुआ है। आबादी के एक हिस्से के भारी संख्या में अत्यन्त गम्भीर कुपोषण का शिकार हाने के बावजदू खाद्यानों का निर्यात बड़ी सीमा तक लगातार बढ़ाया जाता रहा है। 2002 के मानसनू से शुरु होने वाले गंभीर सूखे के दौरान नवम्बर 2003 में सरकार द्वारा 1 करोड़ 70 लाख टन खाद्यान्न का निर्यात किया गया बावजदू इस तथ्य केकि विगत वर्ष जनू 2002 से नवम्बर 2003 के बीच खाद्यान्न उत्पादन में 3 करोड़ टन की कमी आयी थी। उस देश में जहाँ विभिन्न इलाके लगातार स्थायी रूप से अर्ध अकाल के खतरे में रहते हैं, सार्वजनिक वितरण प्रणाली को व्यवहारतः खत्म कर दिया गया है। [7,8]

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

भारत की अर्थव्यवस्था की बुनियादी समस्या आर्थिक विकास की है। आर्थिक विकास से अभिप्राय है कि सर्वजन को उनकी न्यूनतम आवश्यकता को पूरा करने के साधन उपलब्ध करवाना। इस स्वप्न को मूर्तरूप देने के लिये आवश्यक है कि उपलब्ध संसाधनों का कुशलतम उपयोग किया जाये। भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ पर जनसंख्या के एक बड़े भाग की आवश्यकताओं को पूरा करने का दायित्व भूमि संसाधन पर निर्भर है। जनसंख्या की वृद्धि के साथ प्रति व्यक्ति भू क्षेत्र में निरंतर ह्रास हो रहा है दूसरी तरफ निर्धनता व निम्न जीवन स्तर के फलस्वरूप जनसंख्या के एक बड़े भाग का पोषण सतर अति निम्न है। एक अनुमान के अनुसार लगभग 40 प्रतिशत जनसंख्या भूख और कुपोषण जैसे समस्याओं का शिकार है तथा 30 प्रतिशत जनसंख्या के पास पर्याप्त भोजन नहीं है। कृषि भूमि भी भूसरंक्षण खारीपन बीहड़ों का निर्माण आदि अनेक समस्याओं से ग्रसित है। किसी देश की जनसंख्या तभी प्रगतिशील होती है जब उसका भरपूर पोषण होता है। अत: पोषण स्तर में सुधार लाने हेतु कृषि उत्पादन में वृद्धि करना आवश्यक हो जाता है जो दो ही विधियों द्वारा संभव है।

क. कृषिगत क्षेत्र में वृद्धि करके।
ख. वर्तमान कृषिगत क्षेत्र की उत्पादकता में वृद्धि करके।

कृषिगत क्षेत्र में वृद्धि करके उत्पादन बढ़ाने की संभावना भारत में अब लगभग समाप्त सी है अत: उत्पादकताओं में वृद्धि करके ही बढ़ती हुई भारतीय जनसंख्या की मांग को पूरा किया जा सकता है। अत: कृषि उत्पादन तथा जनसंख्या के सह संबंध के संदर्भ में भूमि संसाधन पर जनसंख्या भार का मूल्यांकन करना आवश्यक हो जाता है, तभी कृषि विकास की ठोस योजना तैयार किया जाना संभव है।

सामान्यत: यह देखा गया है कि विकसित देशों में शहरी क्षेत्रों का प्रभुत्व रहता है जबकि आर्थिक दृष्टि से पिछड़े देशों में ग्रामीण क्षेत्र ही प्रधान होता है। भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था की बागडोर ग्रामीण क्षेत्र को ही संभालनी होती है। इसी क्षेत्र में उन सब परिस्थितियों का निर्माण होता है जो संपूर्ण अर्थ व्यवस्था को आगे बढ़ाने में समर्थ होती है। इस पृष्ठ भूमि में यदि देखा जाये तो अध्ययन क्षेत्र जनपद प्रतापगढ़ की अर्थव्यवस्था में ग्रामीण क्षेत्र की प्रधानता परिलक्षित होती है अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण क्षेत्र के प्रभुत्य का ज्ञान तालिका क्रमांक 01 में दिये गये तथ्यों से प्राप्त होता है।[9,10]

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

तालिका क्रमांक 01 अध्ययन क्षेत्र में जनसंख्या का वर्गीकरण					
संकेतक		कुल	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण क्षेत्र की भागेदारी प्रतिशत
1.	जनसंख्या	2529041	2389438	139603	94.48
2.	कृषक	450372	444351	6021	98.66
3.	कृषि श्रमिक	158327	154936	3391	57.86
4.	पशुपालन, वृक्षारोपण	3075	2462	613	80.07
5.	खान खोदना	158	151	07	95.57
6.	पारिवारिक उद्योग	14018	12872	1146	91.82
7.	गैर पारिवारिक	16843	13538	3305	80.38

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

8.	निर्माण कार्य	17591	11087	6504	63.03
9.	व्यापार एवं वाणिज्य	33223	22454	10769	67.59
10.	यातायात एवं संचार	10528	8377	2151	79.57
11.	अन्य कर्मकार	45333	37696	7637	83.15
12.	कुल मुख्य कर्मकार	749468	707924	41544	94.46
13.	सीमांत कर्मकार	70683	69633	1050	98.51
	योग (12+13)	**820151**	**777557**	**42594**	**94.81**

ग्रामीण अर्थव्यवस्था को दो उपक्षेत्रों में बाटा जा सकता है।
1. कृषि क्षेत्र तथा
2. गैर कृषि क्षेत्र

कृषि क्षेत्र में वे सभी लोग शामिल किये जाते हैं जिनके निर्वाह का साधन केवल खेती-बाड़ी है। गैर कृषि क्षेत्र में खेती बाड़ी में लगे हुए लोगों के अतिरिक्त अन्य ग्रामीण समुदाय को शामिल किया जाता है।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

तालिका 0.2 ग्रामीण समाज का स्वरूप और उनकी साधन उपलब्धि			
(अ)	कृषि क्षेत्र	भूमि श्रम अनुपात	रोजगार का स्वरूप
	बड़े कृषक	भूमि > श्रम	प्रमुखत: नियोजक
	माध्यम कृषक	भूमि > श्रम	अनियमित नियोजक
	छोटे कृषक	भूमि < श्रम	अनियमित श्रमिक
	सीमांत कृषक	भूमि < श्रम	प्रमुखत: श्रमिक
	भूमिहीन	पात्र श्रम	पूर्णत: श्रमिक

(ब) गैर कृषि क्षेत्र

क. सामान्य वस्तुओं का व्यापार करने वाले
ख. कृषि आदानों का व्यापार करने वाले।

(स) दस्तकार

क. सामान्य सेवायें उपलब्ध कराने वाले
ख. कृषि क्षेत्र की आवश्यकताएँ को पूरी करने वाले।

परंपरागत ग्रामीण समुदाय आत्म संपन्न और आत्म निर्भर रहे हैं। एक गाँव या आस-पास बसे कुछ गाँव एक आर्थिक इकाई के रूप में रहते थे जिनका उस इकाई के बाहर किसी तरह का लेन-देन नहीं होता था। पंचवर्षीय योजनाओं में इस स्थिति को बदलने के प्रयास किये गये। इन प्रयासों के फलस्वरूप ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अनेक तरह के परिवर्तन प्रकाश में आये हैं, ये परिवर्तन ग्रामीण जीवन के अनेक पहलुओं से संबंधित है जैसे भू सुधार, पशुपालन, वित्त, कृषि, विपणन सेवायें ग्रामीण उद्योग, कल्याणकारी सेवायें ग्रामीण नेतृत्व तथा ग्रामीण प्रशासन आदि।
क्रषि की अवहेलना : GDP में व्रद्धी मुख्यतया औद्योगिक क्षेत्र के पर्याप्त विकास के कारण संभव होती है स्व्ळ नीतियों के कारण ध्यान का केंद्र क्रषि से उद्दोग की ओर परिवर्तित हुआ है जिससे क्रषि की विकास दर को एक धक्का लगा है क्रषि को धक्के का भिप्रय है , भारत के जनसमूह की जीविका तथा रोजी - रोटी के प्रमुख स्रोत को एक बड़ा धक्का सच कहा जाए तो क्रषि की अवहेलना का अर्थ है निर्धनता की अवहेलना (I) यहाँ विशेष रूप से नोट करने वाली बात यह है कि क्रषि क्षेत्र का धीमा विकास अंततः औद्योगिक क्षेत्र की विकास क्रिया में भी बाधा बन सकता है इसका कारण एह है कि (i) औधोगिक क्षेत्र के लिए क्रषि क्षेत्र कच्चे माल का एक महत्वपूर्ण स्रोत है , (ii) क्रषि क्षेत्र औद्योगिक क्षेत्र की श्रम आपूर्ति का प्रमुख श्रोत है , और (iii) ट्रैक्टर व थ्रेशर जैसी कई औद्योगिक वस्तुओ के लिए भरी मांग का आधार क्रषि क्षेत्र प्रस्तुत करता है

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

विकास प्रक्रिया का शेहरी प्रक्रिया का शहरी केन्द्रीकरण : LPG नीतियों के फलस्वरूप विकास प्रक्रिया का शेहरी केन्द्रीकरण हो गया है किसी बहुराष्ट्रीय निगम (MNC) के बारे में आप सोचिये तो आप मुश्किल में इन्हें देश के किसी ग्रामीण क्षेत्रों में देख पाएगे सभी MNC शेहरी क्षेत्रों में ही अपना केंद्र - बिंदु बनाए हुए है, क्योकि उन्हें वहां वंछित आधारित संरचना उपलब्ध है इसके परिणामस्वरूप ' ग्रामीण - शेहरी अंतर ' बढ़ा रहा है कोई भी सामाजिक द्वैतवाद अंततः विकास की प्रक्रिया के लिए खतरा बन जाता है

आर्थिक औपनिवेशवाद : ब्रिटिश शासन के दौरान भारत ने राजनीतिक औपनिवेशवाद के लगभग 200 वर्ष व्यतीत किए अब, जबकि MNC भारतीय अर्थव्यवस्था पर अपना प्रभुत्व जमा रही है, हमे फिर एक प्रकार जिसमे MNC अपने उत्पादों की बिक्री के लिए भारतीय बाजारों का शोषण कर रही है, और इस प्रक्रिया में घरेलू उत्पादक अपनी कमजोर प्रतियोगी शक्ति के कारण सीमांत हो रहे है अर्थात् पीछे की ओर खिसके जा रहे है

उपभोक्तावाद का फैलाव : नीतियों की फलस्वरूप देश में MNCs के फैसले से उपभोक्तावाद बड़े पैमाने पर फैल रहा है (i) विश्वीय वस्तुओ के अनेक प्रकार के ब्राण्ड बाजार में आने से जनसमूह लालायित होकर फिजूलखर्चबन चुके है, अपनी आमदनी से बाहर होकर भी भारतीय समाज पश्चिमी सभ्यता को अपना रहा है, जिसमे उधर लेकर खर्च किया जा रहा है (i) इससे व्यापारियों तथा विनिर्माताओ के लिए बाजार का आकार विस्तृत हो सकता है, परन्तु निश्चित रूप से यह उपभोक्ताओ के रूप में ग्रहस्थो की सम्वेदनशीलता को बढ़ावा है वे प्रदर्शन प्रभाव के शिकार बन जाते है जो भौतिकवाद को तो वधवा देता है परन्तु मन की शांति चीन लेता है ?

एकतरफा सम्वृध्दी प्रक्रिया : LPG ने भारतीय अर्थव्यवस्था की सम्वृध्दी प्रक्रिया को तेज किया है, किन्तु यह एक - तरफा है, यह एक सम्मिलित व्रद्धी प्रक्रिया नही है यह अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों का समावेश नही करती है बल्कि यह एक एसी सम्वृध्दी प्रक्रिया है जो केवल सेवा - क्षेत्र पर केन्द्रित है यह सम्वृध्दी प्रक्रिया है जबकि औद्योगिक सम्वृध्दी मंद है, क्रषि में यह ऋणात्मक है यह स्थिति चिंताजनक है कि भारतीय किसान नकद फसलो के उत्पादन पर अधिक ध्यान दे रहा है क्युकी विदेशो में इसकी मांग है फलस्वरूप खाद्दन्न की घरेलु पूर्ति में निरंतर कमी आ रही है खेद है कि हरित क्रांति के बावजूद हमे खाद्दान्न के आयात के लिए विवश होना पड़ता है 2009 के अंत की ओर खाद्द वस्तुओ की तेजी से बढती कीमते इस तथ्य की और ध्यान दिलाती है कि LPG नीतियाँ अर्थव्यवस्था के क्रषि क्षेत्र में विकास प्रक्रिया के प्रति प्रायः बेखबर है

सांस्कृतिक व्हास : वैश्वीकरण के कारण भारतीय समाज का सांस्कृतिक व्हास हो चूका है आर्थिक सम्पन्नता जीवन के अन्य सभी पहलुओ पर हावी हो चूकी है (i) आज प्रत्येक व्यक्ति आर्थिक रूप से स्वतन्त्र तथा धनी होना चाहता है, वह इस बात को भूलता जा रहा है कि उसकी अपने परिवार अथवा समाज के लिए भी कोई जिम्मेवारी है (i) अपने अरिवर के प्रति वफादारी तथा समाज के लिए निष्ठां जो किसी समय भारतीय संस्कृति का एक अटूट अंग समझा जाता था, भौतिकवाद आ जाने के कारण उसे अब बेकार की बात माना जाता है [11]

आशय

अनेक नये स्कूलों का खोला जाना, प्राथमिक चिकित्सा केंद्रों की स्थापना, परिवार कल्याण एवं नियोजन सेवाओं का विस्तार परिवहन एवं संचार, आकाशवाणी तथा दूरदर्शन का विस्तार आदि अनेक ऐसी बातें हैं जिनसे ग्रामीण जीवन में भी क्रांतिकारी परिवर्तन आये हैं। इन सबके प्रभाव से ग्रामीण समुदाय का जो चित्र उभर कर सामने आया है उसकी प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित हैं।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

(1) कृषि का व्यवसायीकरण :-

कृषि जो ग्रामीण समुदाय का प्रमुख व्यवसाय है अब मात्र जीवन निर्वाह का साधन नहीं रह गई बल्कि इसे लाभ कमाने के साधन के रूप में देखा जा रहा है। इस क्रम को व्यवसायीकरण का नाम दिया गया है। व्यवसायीकरण के लिये उत्तरदायी प्रमुख कारण निम्नलिखित है।

(1) पिछले पचास वर्षों से कृषि के उत्पादन के तरीकों में महत्त्वपूर्ण सुधार हुए हैं, परिणाम स्वरूप कृषि उत्पादकता पहले की तुलना में बहुत अधिक बढ़ गयी है।
(2) कृषि उत्पादन में सुधार के लिये उन्नत किस्म के बीज, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाइयाँ, सिंचाई सुविधा का विकास उत्तरदायी है जिससे न केवल उत्पादन बढ़ा है बल्कि फसल पकने की अवधि भी कम हो गई है।
(3) सड़क और परिवहन के साधनों के विकास के कारण उपज को मंडी तक ले जाना सरल हो गया है।
(4) नियंत्रित मंडियों, सहकारिता तथा वाणिज्य बैंकों तथा अन्य वित्तीय संस्थाओं के विकास के कारण अब कृषक साहूकारों के चंगुल से मुक्त हो रहे हैं, इस मुक्त वातावरण के कारण वह बाजार के लिये अतिरिक्त उत्पादन को प्रेरित हुआ है।

(5) कृषि के व्यवसायीकरण से बैंकिंग व्यवसाय का भी विस्तार हुआ है।

(2) ग्रामीण शहरीवाद :-

पिछले पाँच दशकों से ग्रामीण जीवन में शहरी जीवन शैली के तौर तरीकों की घुसपैठ होती रही है जिससे ग्रामीण जीवन प्रभावित हुआ है। विजातीयता, व्यक्तित्वहीन संबंध, व्यक्तिगत स्वार्थ, अव्यवहारपूर्ण व्यवहारिकता आदि गुणों से ग्रामीण जीवन कुछ समय पहले तक अलग और दूर था किन्तु इसका रंग ग्रामीण जीवन पर धीरे-धीरे चढ़ता जा रहा है। इस नये मिश्रण को हम शहरीवाद का नाम दे सकते हैं। शहरीवाद से जुड़ी आधुनिकता ने ग्रामीण समुदाय के सामाजिक व्यवहार, जीवन दर्शन और उनकी इच्छाओं तथा मांग के स्वरूप में आमूल चूल परिवर्तन कर दिया है। ग्रामीण शहरीवाद से जाति प्रथा धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही है जिससे श्रम की गतिशीलता बढ़ी है और पैतृक धंधों का स्वरूप बदला है। आधुनिकीकरण के एक दूसरा परम्परागत ग्रामीण जीवन स्थानीय निर्मित वस्तुओं से ही जुड़ा रहता था, परंतु पिछले चार पाँच दशकों से स्थिति पूर्णतया परिवर्तित होने लगी है। आकाशवाणी और दूरदर्शन ने उद्योगों द्वारा निर्मित उपभोक्ता वस्तुओं का ज्ञान अब दूर दराज ग्रामीण क्षेत्रों को भ करा दिया है, परिणाम स्वरूप औद्योगिक उपभोक्ता वस्तुएँ अब ग्रामीण जीवन का अंग बनती जा रही है जिसके कारण उपभोक्ता वस्तुओं के निर्माताओं में ग्रामीण बाजारों में अपना सामान बेचने की होड़ सी लग गई है। सरकार ने भी स्वतंत्रता के बाद से ही गाँवों के पुनर्निमाण और विकास की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली है जिसके लिये सरकार ने ग्रामीण उत्थान के कई कार्यक्रम संचालित किये हैं। इन विभिन्न विकास

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

कार्यक्रमों का ही परिणाम है कि ग्रामीण जीवन में आधुनिकता का बोलबाला होता जा रहा है।

संक्षेप में पिछले पाँच दशकों के दौरान भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अनेक परिवर्तन देखने में आये हैं। निःसंदेह ये परिवर्तन विकास के परिचायक हैं अत: इनका स्वागत है, परंतु इनके पीछे छिपी हुई कुछ गंभीर समस्याओं की ओर भी हमें अपना ध्यान आकर्षित करना होगा अन्यथा भविष्य में ये विकास के मार्ग में गंभीर बाधा सिद्ध हो सकती है। ये समस्याएँ है -

1. बढ़ती हुई जनसंख्या के परिणामस्वरूप भूमि पर दबाव बढ़ा है। संयुक्त परिवार प्रणाली का ह्रास हुआ है जिसके कारण भूमि का उप-विभाजन और अपखंडन बढ़ा है जिससे जोतों का आकार छोटा होता जा रहा है यह उन्नत कृषि के अनुकूल नहीं है।

2. कृषक की बाजार शक्तियों पर निर्भरता बढ़ती जा रही है, अनुभव यह बताता है पर निर्भरता अत्यधिक जोखिम पूर्ण होती है। पर निर्भरता के कारण ही बाजार की शक्तियाँ उसके शोषण का माध्यम बनती जा रही है।

3. कृषि में नई तकनीकी के प्रयोग से कृषि आय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है किंतु इस आय का एक बड़ा भाग ग्रामीण समुदाय के उन्नत और समृद्ध वर्ग हाथों में केंद्रित होता जा रहा है। निर्बल और कमजोर वर्ग को इस नई तकनीकी का कोई विशेष लाभ नहीं मिल पाया है परिणाम स्वरूप आर्थिक विषमतायें बढ़ती जा रही है।

4. शहरीवाद ग्रामीण जीवन पर पूरी तरह छाया हुआ है परिणामस्वरूप व्यवहार और आचरणों में परम्परागत सरलता का लोप होता जा रहा है। यह स्थिति निर्बल वर्ग के अनुकूल नहीं है।

5. ग्रामीण रोजगार की स्थिति निरंतर बिगड़ती जा रही है परिणाम स्वरूप भूमिहीन तथा सीमांत कृषक गरीबी में और अधिक धँसते जा रहे हैं।

स्पष्ट है कि पिछले पाँच दशकों में कृषि उत्पादन की मात्रा और प्रति हेक्टेयर उत्पादकता बढ़ी है परंतु इसका अधिकांश लाभ संपन्न वर्ग को ही प्राप्त हुए। साधनहीन और निर्बल वर्ग की दशा निरंतर सोचनीय होती जा रही है, बिना इस वर्ग की स्थिति में सुधार किये सारा विकास आधा अधूरा ही रहेगा और सर्वांगीण विकास की संकल्पना केवल कल्पना तक सीमित रह जायेगी।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

ऐसी स्थिति में जनपद प्रतापगढ़ जो उत्तर प्रदेश के मध्य में स्थित है जिसका कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 362423 हे. है जिसमें से कृषि के लिये उपलब्ध शुद्ध भूमि केवल 61.28 प्रतिशत है और प्रति व्यक्ति कृषि भूमि की उपलब्धता 0.09 हे. है। यह आवश्यक होता जा रहा है कि कृषि भूमि का सर्वोत्तम विधि से उपयोग करते हुए बढ़ती हुई जनसंख्या के भरण-पोषण के लिये खाद्यान्य मांग की आपूर्ति संभव बनायी जा सके। जब आवश्यकता इस बात की अनुभव की गयी कि संबंधित अध्ययन क्षेत्र का व्यापक सर्वेक्षण करके कृषि भूमि की उपलब्धता उसकी उर्वरा शक्ति प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता तथा प्रति व्यक्ति उपभोग की मात्रा आदि तथ्यों का ज्ञान प्राप्त किया जाये, बिना इन तथ्यों का ज्ञान प्राप्त किये कृषि नियोजन संबंधी योजनायें बना भले ही ली जायें परंतु उसकी सफलता संदिग्ध रहेगी। वर्तमान समय में इस ग्रामीण क्षेत्र की जनसंख्या तथा कृषि संबंधी समस्याओं के अध्ययन की नितांत आवश्यकता है जिससे इन समस्याओं के समाधान तथा मानव संसाधन के विकास की योजनायें बनायी जा सके। प्रस्तावित अध्ययन में जनपद प्रतापगढ़ की जनसंख्या का पोषण स्तर तथा कुपोषण जनित बीमारियों की समस्याओं का विश्लेषण किया जायेगा।[10,11]

भारत में आर्थिक उदारीकरण के फलस्वरूप देश में निर्माण एवं सेवा क्षेत्र के विकास पर विषेष बल दिया गया और उसके सकारात्मक प्रभाव भी दृष्टिगोचर होते है। लेकिन अन्य क्षेत्रों के साथ कृषि क्षेत्र में उत्पादन वृद्धि की दृष्टि से आधुनिकीकरण पर विशेष बल दिया जाना था, लेकिन वास्तविकता यह है, कि वास्तव में कृषि की पूर्ण उपेक्षा की गयी है। यही कारण है कि कृषि क्षेत्र में पूँजी निर्माण की दर में गिरावट आयी है। इसके कारण ग्राम विकास और सिंचाई पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा, जिससें कृषि और विशेषकर खाद्यान्न उत्पादन की वृद्धि दर में कमी आयी है। यह कृषि विकास की दृष्टि से चिन्ताजनक स्थिति है। कृषि में सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा विकास किया जाना था, लेकिन इसमें कमी आई और उसका ग्राम विकास तथा सिंचाई पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। फिर भी सरकार का एक प्रमुख उद्धेष्य वस्तुओं व सेवाओं के व्यापार में वृद्धि करना है।

लेकिन भारतीय अर्थव्यवस्था में उदारीकरण के फलस्वरूप कृषि निर्यात् की वृद्धि दर में सुधार हुआ। यह वृद्धि दर 1970-71 से वर्ष 1980-81 के बीच 1990-91 कि दौरान घटकर 2.24 प्रतिशत रह गई परन्तु आर्थिक सुधारों

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

बाद 1990-91 से 2008-09 कें दौरान निर्यात की बृद्धि दर नयी नीति का कृषि वस्तुओं के निर्यात पर गहरा प्रभाव पड़ा। जिससे कृषि क्षेत्र में बहुत कुछ सुधार सम्भव हुआ है, लेकिन उसके पश्चात देश में कृषि वस्तुओं का आयात भी काफी मात्रा में हुआ है।

स्वाभाविक रूप से भारत की कृषि निर्यातों में उतार-चढ़ाव की स्थिति बनी रही, लेकिन भारत सरकार ने ऐसी स्थिति में किसानों के हितों की रक्षा करने का भरसक प्रयास किया और उस स्थिति में उन्होंने ग्रामीण क्षेत्रों से समर्थन मूल्य पर बड़ी मात्रा में गेहूँ क्रय करना प्रारंभ कर दिया साथ ही सरकार ने पूर्व की अपेक्षा तीवृता से कृषि विपणन व्यवस्था को सुधारने हेतु बड़ी-बड़ी मण्डियों की शहरों से लेकर ग्रामीण क्षेत्रों तक स्थापना की तथा किसानों को और अधिक सुविधा देने के लिए तहसील स्तर से भी नीचे गाँव तक सरकारी समितियों के माध्यम से कृषि उत्पादों के खरीद हेतु अप्रैल से जून तक अस्थायी केन्द्र स्थापित किये और कृषि उत्पादों को क्रय किया गया।

यह विपणन व्यवस्था इसलिए अपनायी गयी, कि कई किसान अपने कृषि उत्पादों को लेकर शहरी कृषि मण्डियों तक नहीं पहुँच पाते हैं और उन्हें अपना कृषि उत्पादन गाँव के साहूकारों, जमाखोरों और मध्यस्थों को बेचना पड़ता है। जिससें किसानों को हानि उठानी पड़ती है। अतः सरकार ने कृषि विपणन व्यवस्था में सुधार की दृष्टि से मण्डियों का विस्तार किया। वास्तविक रूप में इस योजना के क्रियान्वयन का उद्देश्य वास्तविक किसान को शोषण से मुक्ति दिलाना था और यह सब भारत में अपनायी जाने वाली उदारीकरण की नीतियों के पश्चात अपेक्षित कृषि व्यवस्था को विकास से जोड़नें के लिए आवश्यक था। जिससे वास्तविक रूप में किसानों को कृषि विपणन व्यवस्था का लाभ दिया जा सके। उनके आर्थिक हितों की रक्षा की जा सके तथा किसानों को उनकी उपज का वास्तविक एवं उचित मूल्य दिलाकर उनकी वास्तविक आय में वृद्धि करना, ताकि उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके। तथा अतिरेक उत्पादन का क्रय कर देश में गरीब परिवारों को सस्ती दर पर अनाज उपलब्ध कराकर दोनो समय भोजन उपलब्ध कराया जा सके।

लेकिन इन सब प्रक्रियाओं में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है कि ये सब नीतियाँ भारत सरकार की स्वयं की नीतियाँ हैं। जिसके अन्तर्गत सरकार ने किसानों को उत्पादित कृषि उपज को ग्रामीण क्षेत्र में ही विपणन हेतु व्यवस्था उपलब्ध करायी। क्रय किये गये माल को भण्डारग्रह तक पहुँचानें की व्यवस्था भी सरकार के ऊपर निर्भर थी। मात्र किसानों को गाँव के नजदीक स्थापित कृषि विपणन केन्द्र अथवा सहकारी विपणन तक पहुँचाने का कार्य पूर्ण करना था। इसी के अन्तर्गत भारत सरकार ने कृषि विपणन केन्द्रों पर कृषि उपज बेचने वाले किसानों को भुगतान की व्यवस्था भी अत्यन्त सुलभ एवं सरल बनायी। जिसके अन्तर्गत किसानों को भुगतान हेतु अपना बैंक खाता विपणन केन्द्र पर देना पड़ता है तथा उन्हें विक्रय किये गये कृषि उपज की तौल की रसीद किसानों को प्रदान कर दी जाती है तत्पश्चात 10 या 15 दिन में भुगतान की निर्धारित राशि उनके खाते में पहुँच जाती है। इस प्रकार कृषि विपणन व्यवस्था के अन्तर्गत किसान को केन्द्र एव राज्य सरकार द्वारा परिवहन सुविधा का लाभ, सरकारी विक्रय केन्द्र का लाभ, भण्डारण से मुक्ति का लाभ तथा तौल में कटौती का लाभ और घर बैठे भुगतान का लाभ प्राप्त होता है।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

इस प्रकार केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा प्राथमिकताओं के आधार पर किसानों के हितों की रक्षा करने हेतु, उनके आय स्तर को ऊँचा उठाने हेतु तथा कृषि क्षेत्र में पूँजी निवेश को प्रेरित करने हेतु, कृषि विपणन व्यवस्था में व्यापक सुधार किया गया है। लेकिन इस प्रक्रिया में आर्थिक उदारीकण की कोई भूमिका दृष्टिगोचर नहीं होती और न ही उदारीकरण का कृषि विपणन व्यवस्था पर कोई धनात्मक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। यदि केन्द्र एवं राज्य सरकार यह सब प्रयास नहीं करती, तो हो सकता है कि भूमण्डलीकरण की व्यवस्था में अपनायी गयी नीतियों तथा गैट समझौते के अन्तर्गत भारतीय कृषि एवं कृषि विपणन पूरी तरह पतन के कगार पर पहुँच जाते और विकसित देशों का माल भारत में खुले रूप में बिकता और भारतीय किसान पूरी तरह आर्थिक दृष्टि से कमजोर हो जाते। अर्थात उदारीकरण की नीति विपणन व्यवस्था की दृष्टि से पूर्णतः प्रतिकूल सिद्ध हुई है।[9,10]

परिणाम

भारत में किसानों ने फसलों का चयन करते समय सदैव अपनी आवश्यकताओं को ध्यान में रखा है। इसलिये वह व्यापारिक फसलों की तुलना में खाद्य फसलों को प्राथमिकता देता है। गैर खाद्य फसलों का योगदान कुल फसलों के अंतर्गत क्षेत्रफल द्वारा ज्ञात किया जा सकता है, देश की कुल बोई गयी भूमि के क्षेत्रफल में तीन चौथाई भाग खाद्य फसलों के अंतर्गत आता है। इसका प्रमुख कारण गेहूँ और चावल का न्यूनतम सुरक्षित मुल्यों की घोषणा तथा हरितक्रांति का प्रभाव केवल गेहूँ और चावल की फसलों पर विशेष रूप से पड़ा। इसका प्रभाव यह हुआ कि देश में खाद्यान्नों की मांग पूरी करने के लिये पर्याप्त भूमि उपलब्ध है, परंतु देश के समक्ष व्यापारिक फसलों के उत्पादन की समस्या उठ खड़ी हुई है विशेष रूप से तिलहन का उत्पादन इसकी औद्योगिक माँग की तुलना में बहुत कम हो गया है। अनाज के उत्पादन को अधिक महत्त्व देने का परिणाम यह हुआ है कि दालों का उत्पादन भी अत्यंत कम हो गया है जिनको आयात द्वारा भी पूरा नहीं किया जा सकता है क्योंकि विश्व के अन्य देशों में भी दालों का उत्पादन बहुत कम होता है, इसलिये अब सरकार ने दालों के उत्पादन को बढ़ाने के लिये प्रोत्साहन देने हेतु अनेक योजनाओं को संचालित किया है। अनाज में यद्यपि गेहूँ और चावल का प्रमुख स्थान है परंतु भारतीय कृषि में मोटे अनाजों, बाजरा, ज्वार, मक्का तथा जौ का परम्परागत खाद्यान्नों में काफी महत्त्व रहा है क्योंकि इन फसलों का उत्पादन सूखी भूमि पर किया जाता है यद्यपि इन फसलों का उत्पादन कम है परंतु मानसून का इनके उत्पादन पर बहुत प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है, इसलिये मौसम की अनिश्चितता से बचने के लिये किसान मोटे अनाजों का उत्पादन करते रहे हैं।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

अध्ययन क्षेत्र एक ग्रामीण प्रधान क्षेत्र है जहाँ आज भी अधिकांश जनसंख्या भूमि संसाधन से अपने जीवन-यापन के लिये संसाधन जुटाती है।

कृषि पर अत्यधिक निर्भरता के कारण लोगों की आय का स्तर अत्यंत नीचा है। यद्यपि पिछले पाँच दशकों से कृषि उत्पादन बढ़ा है परन्तु फिर भी उपलब्ध कृषि क्षेत्र पर परम्परागत खाद्यान्न फसलों का उत्पादन, नगदी फसलों का नगण्य क्षेत्र, परम्परागत कृषि प्रणाली, कृषि में अपेक्षित पूँजी निवेश का अभाव के कारण कृषि उत्पादन अपेक्षित गति से नहीं बढ़ा है। उत्पादन वृद्धि का अधिकांश लाभ धनी वर्ग को ही प्राप्त हुआ है जिससे आर्थिक विषमतायें भी बढ़ी है, जबकि आर्थिक विकास की परिधि में समृद्धि और वितरण की प्रक्रियायें निहित होती है, समृद्धि क्रिया किसी भी क्षेत्र में कुल वस्तुओं और सेवाओं की उत्पादन वृद्धि में योदान करती है जबकि वितरण प्रक्रिया यह निर्धारित करती है कि उपलब्ध वस्तुओं और सेवाओं या उनकी वृद्धि का कितना अंश किस वर्ग को मिलता है। समृद्धिगत आर्थिक नीति का लक्ष्य यह होना चाहिए कि अर्थव्यवस्था के समस्त क्षेत्र सामान्य रूप से विकसित और परिवर्तित हों तथा वितरणात्मक न्याय यह निर्देश देता है कि समृद्धिगत लाभों का अधिकांश भाग उन लोगों या उन क्षेत्रों को मिलना चाहिए जो अपेक्षाकृत अधिक गरीब और पिछड़े हों समृद्धि और वितरणात्मक न्याय का पारस्परिक समन्वय किसी भी क्षेत्र के आय वर्ग के लोगों को खुशहाल बना सकता है। इसलिये प्रत्येक कल्याणकारी राज्य का मुख्य उद्देश्य आर्थिक विकास की ऐसी प्रक्रिया को प्रोत्साहित करना चाहिए जिससे सभी कमजोर क्षेत्रों और वर्गों के लोग अपेक्षाकृत अधिक लाभान्वित हो सकें। जिससे समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता कम की जा सके। परंतु ग्रामीण विकास की अनेक योजनायें संचालित करने के बावजूद भी योजनाकाल में आर्थिक विषमता बढ़ती जा रही है। अमीर और गरीब के मध्य असमानता की खायी और चौड़ी होती जा रही है। एक ओर चंद लोग विलासी जीवन व्यतीत कर रहे हैं तो दूसरी ओर बहुसंख्यक जनसंख्या अल्प पोषण और कुपोषण से त्रस्त है। कुछ लोग आराम और वैभव के साम्राज्य में हैं तो बहुसंख्यक समुदाय के विकासजन्य औद्योगिक उत्पादन अचंभे और मात्र देखने सुनने की चीजें बनी हुई है न कि प्रयोग कर सकने की समाज की आर्थिक विषमता मापने के लिये विभिन्न वर्गों के मध्य आय, संपत्ति व उपयोग स्तरों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।[8,9]

आर्थिक विषमताओं का एक महत्त्वपूर्ण पहलू समष्टि रूप से ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के मध्य व्याप्त आर्थिक विषमता है। अब तक की विकास प्रक्रिया में ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के मध्य आर्थिक विषमता बढ़ती जा रही है। ग्रामीण क्षेत्रों का विकास शहरों के सामान नहीं हुआ है। देश ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों के मध्य विभक्त हो गया है। ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के मध्य आर्थिक विषमता की जानकारी नेशनल काउन्सिल ऑफ सप्लाइड इकोनॉमिक रिसर्च के एक नवीनतम अध्ययन से होती है जिसमें विवरण दिया गया है कि यदि दोनों क्षेत्रों के मध्य आय संपत्ति एवं उपयोग स्तरों की तुलना की जाये तो इनमें व्याप्त आर्थिक विषमता का बोध होता है। इस अध्ययन के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र के केवल 4.90 प्रतिशत परिवारों की वार्षिक आय 10000.00 रुपये या इससे अधिक है जबकि नगरीय क्षेत्र के 17.61 प्रतिशत परिवारों की औसत वार्षिक आय 10 हजार रुपये या उससे अधिक है। समस्त नगरीय परिवारों की औसत वार्षिक आय 7040 रुपये है जबकि ग्रामीण परिवारों की औसत आय मात्र 3930 रुपये है। नगरीय क्षेत्र के उच्चतम 1.5 प्रतिशत परिवारों का औसत वार्षिक आय 30 हजार रुपये या उससे अधिक है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों के मात्र 0.62 प्रतिशत परिवारों की आय 30 हजार रुपये या उससे अधिक है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति औसत बचत मात्र 106 रुपये है जबकि नगरीय क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति औसत बचत 272 रुपये है जो ग्रामीण क्षेत्र की बचत से ढाई गुना अधिक है।

आवश्यक सामाजिक सेवाओं की जो अवस्थापना गाँव में उससे कई गुना शहरों में है शहर में बहूखंडीय प्रासाद बने किन्तु गाँवों के कच्चे मकानों का आकार एवं आयतन कम होता गया है। शहरों में आधुनिक उद्योगजन्य सुख सुविधायें लेने की होड़ लगी है। किन्तु बहुसंख्यक गाँव के लोग कड़ी मेहनत के बाद भी बेहद जरूरी चीजों से वंचित रहे हैं। इसी क्षेत्रीय असमानता के कारण शहर के वैभव की चकाचौंध से आकृष्ट तथा बेरोजगारी के मारे गाँव के लोग शहरों की ओर पलायन करते हैं जहाँ उन्हे दिन भर की कड़ी मेहनत के बाद जो क्रयशक्ति प्राप्त होती है वह उनकी जरूरतों को पूरा करने में अपर्याप्त होती है। आज नगरों के मुखापेशी होते जा रहे हैं। खाद्यान्न उत्पादन के अतिरिक्त अन्य अधिकांश उत्पादन क्रियायें नगरों और बड़े औद्योगि घरानों में केंद्रित होती जा रही हैं जो वस्तुयें पहले गाँव में सुगमतापूर्वक बनायी जा सकती थी वे अवयान्त्रिक और अन्य अवस्थापनागत सुविधाओं के कारण शहरों में बनने लगी परिणाम स्वरूप गाँव के कारीगर और दस्तकार बेकार होते जा रहे है। इससे गाँव और नगरों के मध्य विषमता होना स्वाभाविक है। आय एवं संपत्ति वितरण की भांति ग्रामीण क्षेत्र में उपभोग स्तर में भी विषमतायें व्याप्त है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के 32वीं आवृत्ति के आंकड़ों के आधार पर इस तथ्य को जाना जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्र के निम्नतम 10 प्रतिशत परिवारों का औसत वार्षिक उपभोग व्यय केवल 634 रुपये है जबकि उच्चतम 10 प्रतिशत परिवारों में औसत वार्षिक उपभोग 5895 रुपये है। इन तथ्यों से स्पष्ट है कि संपन्न और विपन्न वर्ग के मध्य अत्यंत चौड़ी खायी है।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि योजनाकाल में संचालित विकास योजनाओं से ग्रामीण क्षेत्र अपेक्षित लाभ प्राप्त नहीं कर सके हैं। अध्ययन क्षेत्र भी पूर्णतया ग्रामीण क्षेत्र है जहाँ कि 94 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या आज भी गाँव में निवास करती है। मूलत: कृषि से ही जीवन-यापन के संसाधन प्राप्त करने वाली अधिकांश जनसंख्या अपनी आय का एक बड़ा भाग परिवार के भरण-पोषण पर व्यय करने के लिये बाध्य है। कृषि की न्यून उत्पादकता सिंचाई सुविधाओं की अपर्याप्तता, नवीन तकनीकी का कृषि क्षेत्र में अत्यल्प प्रयोग, बेरोजगारी का बड़ा आकार जैसी समस्याओं के कारण लोगों का जीवनस्तर केवल अपने भरण-पोषण तक सीमित है। इसी कारण पोषण स्तर भी निम्न बना हुआ है। जनपद का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 362423 हे. है जिसमें कृषि के लिये उपलब्ध शुद्ध कृषि भूमि केवल 61.28 प्रतिशत है और प्रति व्यक्ति कृषि भूमि की उपलब्धता 0.09 हे. [10]

निष्कर्ष

पर्याप्त खाद्य पदार्थ जीवन की प्राथमिक आवश्यकता है। विकास प्रक्रिया का प्रथम लक्ष्य खाद्य पदार्थों का पर्याप्त उत्पादन तथा उचित वितरण है। वर्तमान आर्थिक विचारधारा इस निष्कर्ष पर सहमत है कि गरीबी कम करने के लिये ऊँची वृद्धि दर आवश्यक तो है परंतु पर्याप्त नहीं। विकास का मूल तत्व सामाजिक न्याय की प्राप्ति में निहित है। विकास प्रक्रिया में आय वितरण को उत्पादन से पृथक नहीं किया जा सकता है। इस कारण आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय में कोई अंतर्विरोध नहीं है विकास की यह विधि गरीबी समस्या के समाधान हेतु कुछ प्रत्यक्ष उपायों की पुष्टि करती है तथा ऐसे कार्यक्रमों व नीतियों का निर्देश करती है जो गरीब जनसंख्या के रहन-सहन स्तर में सुधार कर सकें। यह विधि उन वस्तुओं के बड़े पैमाने पर उत्पादन को प्रोत्साहित करती है जिनका उपयोग व्यापक जनसमूह करता है और जिनके उत्पादन में बहुत से हाथों को काम मिलता है न कि चंद हाथों और स्वचालित मशीनों को। आज देश की विकास प्रक्रिया में प्रभावी रूप से इस विकास युक्ति के अनुकरण की आवश्यकता है।

मानवीय संशाधन आर्थिक विकास में दोहरी भूमिका का निर्वाह करते हैं। साधन के रूप में श्रमशक्ति एवं उद्यमियों को सेवायें प्रदान करते हैं, मानवीय संसाधन की इस भूमिका पर देश का न केवल कुल उत्पादन का स्तर निर्भर करता है बल्कि अन्य साधनों का प्रयोग भी संभव होता है। यदि मानवीय साधन उत्कृष्ट कोटि के हैं तो आर्थिक विकास की गति तेज हो जाती है। अत:आर्थिक विकास की दर के निर्धारण में मानवीय संसाधनों की गुणात्मक श्रेष्ठता का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है इसलिये यह कहा जा सकता है कि भौतिक पूँजी निर्माण और मानवीय पूँजी निर्माण सम्मिलित रूप से आर्थिक विकास को गति को तीव्रता प्रदान करते हैं। उपभोग इकाई के रूप में मानवीय संसाधन राष्ट्रीय उत्पाद के लिये मांग का निर्माण करते हैं, यदि मनुष्यों की संख्या राष्ट्रीय उत्पादन की तुलना में अधिक है तो सामान्यतया खाद्यान्नों की पूर्ति मांग की तुलना में कम पड़ जाती है इससे खाद्यान्नों की स्वल्पता की समस्या उत्पन्न होती है। साथ ही राष्ट्रीय उत्पादन का एक बहुत बड़ा भाग केवल उपभोग कार्यों के लिये ही उपयोग कर लिया जाता है, निवेश कार्यों के लिये बहुत कम अतिरेक बचता है जिससे पूँजी निर्माण की गति धीमी हो जाती है। जब किसी देश की जनसंख्या तेज गति से बढ़ती है तो खाद्यान्नों की भी मांग तेज गति से बढ़ती है, यदि खाद्यान्नों का उत्पादन जनसंख्या वृद्धि दर के अनुपात में नहीं बढ़ पाता है तब कुपोषण तथा

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2347-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 7.569|

|| Volume 11, Issue 2, February 2022 ||

| DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1102050 |

अलपपोषण की समस्या उत्पन्न हो जाती है और यदि देश की जनशक्ति का उचित पोषण नहीं होता है तो उनकी कार्य-क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है और देश का कुल उत्पादन कम होने लगता है अत: देश अथवा क्षेत्र के भूमि संसाधन पर यह भार आ जाता है कि वह क्षेत्र विशेष इतना खाद्यान्न उत्पादन करने में सक्षम हो कि वहाँ के निवासियों का उचित पोषण संभव हो सके।

भारत के पास कृषि वस्तुओं के निर्यात की पर्याप्त क्षमता एवं संम्भावनायें है। लेकिन इसके लिये यह आवश्यक है कि कृषि में आधार संरचना के निर्माण में बड़ी मात्रा में निवेश किया जाये तथा कृषि वस्तुओं के उत्पादन में दक्षता तथा विविधीकरण को वशेष ध्यान दिया जायें इस तरह स्पष्ट है कि नई आर्थिक नीति के उपरान्त विश्वव्यापीकरण के अन्तर्गत उदारीकरण नीति के काल में देश में कृषि क्षेत्र अपेक्षित रहा और इसके विकास की दर धीमी व उतार - चढ़ाव कुछ वर्षों में वृद्धि दिखायी दी, लेकिन 1996-97 के पश्चात् इसमें भी कमी आ गयी। इसके पीछे कारण कृषि में व्यापार की शर्तो में उदारीकरण की अवधि में कोई सुधार नही हुआ। यह सब इस बात का संकेत है, कि देश की अर्थव्यवस्था में उदारीकरण के पश्चात् भी कृषि एक उपेक्षित एवं पिछड़ा हुआ क्षेत्र है, और इसका कृषि अर्थव्यवस्था पर कोई सकारात्मक प्रभाव दृष्टिगोचर नही हुआ। जो एक गम्भीर चिंता का विषय है।

उक्त अध्ययन के आधार पर स्पष्ट है कि भारत में उदारीकरण की नीति के जहाँ कुछ नकारात्मक प्रभाव होगें, वहीं कुछ सकारात्मक प्रभाव भी होंगे, लेकिन सम्भावनायें यह है कि देश में जिस एक नयी प्रवृत्ति ने जन्म लिया है उसमें हम विकास की ओर अग्रसर भी हुये हैं, जिसमें तकनीकि ज्ञान एवं अनुभव को बढ़ाने के लिए षिक्षा में गुणवत्ता सुधार को प्राथमिकता दी गयी है। जिससे प्रबंध, कुशलता, व्यापार एवं पूँजीगत समस्याओं के समाधान में एक नयी सोच एवं विचारधारा को अपनाया गया है। जो हमें भविष्य में विकास की ओर ले जाने में सहायक सिद्ध होगी और हम वैश्विक प्रतियोगिता में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाने में सफल होगें।[11]

संदर्भ

1) भारतीय आर्थिक नीति डॉ. पी. डी. माहेश्वरी डॉ. शीलचन्द्र गुप्ता कैलाश पुस्तक सदन - भोपाल
2) आर्थिक नीति और प्रशासन डॉ. नीलिमा देशमुख कॉलेज बुक डिपो, जयपुर
3) आर्थिक विकास एवं नियोजन एस. बी. सिंह एस. चंद एण्ड कम्पनी, रामनगर नई दिल्ली
4) भारतीय अर्थव्यवस्था डॉ. वी. सी. सिंन्हा साहित्य भवन पब्लिकेशन्स एण्ड डिस्ट्रीव्यूटर्स प्रा. लि
5) Hand Book of statistics or Indian Economy 2001-09 Deputy Governor Reserve Bank of India
6) टाइम्स ऑफ़ इण्डिया समाचार पत्र नई दिल्ली
7) भारत (सन्दर्भ ग्रंथ) निर्देशक प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय भारत सरकार नई दिल्ली
8) भारतीय अर्थव्यवस्था मिश्र एवं पुरी हिमालया पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली
9) म. प्र. आर्थिक सर्वेक्षण 2001-09 संचालक आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय म. प्र. भोपाल
10) कृषि विकास की समस्याये कृष्ण कुमार उमाहिया मित्तल पब्लिकेशन्स नई दिल्ली
11) कृषि अर्थशास्त्र डॉ. जय प्रकाश मिश्र साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा

INNO SPACE

SJIF Scientific Journal Impact Factor

Impact Factor: 7.569

doi cross ref

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

निस्केयर NISCAIR

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

9940 572 462 6381 907 438 ijirset@gmail.com

Scan to save the contact details

www.ijirset.com